Aayushi International Interdisciplinary Research Journal (AIIRJ)

VOL- X | ISSUE- II | FEBRUARY | 2023 | PEER REVIEW e-JOURNAL | IMPACT FACTOR 7.367 | ISSN 2349-638x

हिन्दी भक्तिकालीन साहित्य में रहीमदास का योगदान

पार्वती,
शोधार्थी,
ईमेल : parvati9@gmail.com

शोध सार –

भक्तिकालीन साहित्य के कवियों में रहीमदास का एक विशेष और अलग स्थान है। वे एक सुप्रसिद्ध कवि के साथ–साथ नीतिकार, योद्धा और कई भाषाओं के जानकार भी थे। भक्तिकालीन साहित्य का वैविध्य कई दृष्टियों से रहीमदास के कृतित्व से ही पूरा होता है। रहीमदास मुसलमान होने के बावजूद भी हिन्दू देवी–देवताओं का स्तुति गान करते थे। इनके जीवन के संबंध में बहुत कम जानकारी मिलती है लेकिन इन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से अपने बारे में बहुत जानकारी उपलब्ध करवाई है। ये मुगल बादशाह अकबर और जहाँगीर के काफी करीब थे जिस कारण इनके काव्य में तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवेश की पर्याप्त जानकारी उपलब्ध हो जाती है। अकबर ने रहीम को 'मिर्जा खां' की उपाधि दी थी। इन्होंने अकबर की सेना में शामिल होकर कई युद्धों में अपनी वीरता का परिचय दिया था। कहा जाता है कि हल्दीघाटी के युद्ध में अकबर ने महाराणा प्रताप के खिलाफ युद्ध किया था। कुछ समय पश्चात् अकबर ने रहीम की वीरता से प्रभावित होकर इन्हें जौनपुर की जागीर दे दी थी। रहीमदास की वीरता के साथ ही हिन्दी साहित्य में भी इनका बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मुसलमान होते हुए भी रहीम को हिन्दी, संस्कृत, ब्रजभाषा, खड़ी बोली, अवधी, तुर्की आदि अनेक भाषाओं का ज्ञान प्राप्त था। तत्कालीन समय में बादशाह अकबर ने मुस्लिम विद्वानों को संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया था। रहीम ने भी संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त किया और इन्होंने संस्कृत के धर्म–ग्रन्थों का अध्ययन करने के साथ ही संस्कृत ग्रन्थों की रचना भी की। रहीम ने अपने ग्रन्थ 'खेटकौतुकम' की रचना संस्कृत भाषा में की है जिसमें भगवान श्री कृष्ण से प्रार्थना की गई है। रहीमदास बहुत ही दानवीर व्यक्ति थे और उनकी दानशीलता की ख्याति दूर–दूर तक फैली हुई थी। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी इनकी दानशीलता के विषय में कहा है, ''इनकी दानशीलता हृदय की सच्ची प्रेरणा के रूप में थी। कीर्ति की कामना से उनका कोई संपर्क न था।'' इनके विषय में प्रचलित है कि इनके घर के दरवाज़े ज़रूरतमंदों के लिए हमेशा खुले रहते थे। वे निर्धन कवियों की हर संभव सहायता करते थे ताकि उनकी काव्य प्रतिभा को उभारा जा सके। इस्लाम धर्मानुयायी होने के बावजूद भी इन्होंने अपनी काव्य रचनाओं के द्वारा हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनके काव्यों में इन्होंने रामायण, महाभारत, पुराण तथा गीता जैसे प्रसिद्ध हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों के कथानकों का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त इनके काव्य में भक्ति, नीति, प्रेम व श्रृंगार का एक अद्भुत सामंजस्य मिलता है। इन्होंने मानव जीवन का अत्यन्त सूक्ष्म पर्यवेक्षण किया था जिस कारण इनके काव्य में मानव जीवन कई दृष्टिकोणों से चित्रित हुआ है।

मुख्य शब्द– *स्तुति, सामंजस्य, आश्रयदाता, आत्मश्लाघा, बहुभाषाविद्, पारखी।*

परिचय –

किसी भी कृतिकार के व्यक्तित्व का वर्णन होना स्वाभाविक है। इस संदर्भ में देखा जाए तो रहीमदास के व्यक्तित्व का अध्ययन भी आवश्यक हो जाता है। रहीमदास के विषय में कहा जा सकता है कि वे एक कुशल सेनापति, वीर सैनिक, सफल प्रशासक, अद्वितीय आश्रयदाता, गरीबों की सहायता करने वाले, महान कवि, कला पारखी, विविध भाषाओं के ज्ञाता थे। उनकी इन्हीं विशेषताओं के कारण इतिहासकारों ने न केवल उनकी प्रशंसा की है बल्कि उन पर अनेक प्रसिद्ध रचनाएँ भी लिखी हैं। रहीम अपने केवल आन्तरिक गुणों के कारण ही नहीं बल्कि अपने बाहरी व्यक्तित्व/शारीरिक आकर्षण से भी जनता के बीच

प्रिय बने रहे थे। प्राचीन कवियों के जीवन परिचय के विषय में ज्यादा जानकारी उपलब्ध नहीं हो पाती है क्योंकि कवियों द्वारा अपने विषय में वर्णन करना आत्मश्लाघा माना जाता था। परन्तु हमारे लिए यह सौभाग्य की बात है कि रहीम के विषय में यह समस्या नहीं आती है क्योंकि हिन्दी जगत रहीम के नाम से चिर–परिचित रहा है। इनका पूरा नाम अब्दुल रहीम खानखाना था परन्तु इन्होंने अपनी रचनाओं में स्वयं के लिए 'रहीम' या 'रहिमन' नाम का प्रयोग किया है। 'अब्दुर्रहीम' कहने की अपेक्षा 'अब्दुलर्रहीम' कहना अधिक शुद्ध ज्ञात होता है और 'खानखाना' से अभिप्राय राजाओं का राजा या राजाधिराज होता है। यह उपाधि इन्हें अलग–अलग समय में शौर्य प्रदर्शनादि के कारण प्राप्त हुई थी। 'खानखाना' की उपाधि मिलने से पूर्व उनके नाम से पहले 'मिर्जा' शब्द जोड़ा जाता था। रहीम को जब चार वर्ष की अवस्था में अकबर के दरबार में लाया गया था तब अकबर ने उनका नाम 'मिर्जा खां' रख दिया था। इनका जन्म लाहौर में 1556 ई॰ में हुआ था। रहीम के पिता का नाम बैरम खां और माता का नाम सुल्ताना बेगम था। बैरम खां हुमायूँ के प्रधान सेनापति, मंत्री और अंतरंग सखा थे। ये अत्यधिक शौर्यशाली व्यक्ति थे। इनकी मृत्यु के पश्चात् रहीम को अकबर ने संरक्षण प्रदान किया तथा इनकी माता युवती व विधवा सुल्ताना बेगम से विवाह कर लिया तथा रहीम का पालन–पोषण अपने धर्मपुत्र की भांति किया। रहीम की शिक्षा–दीक्षा अकबर के दरबार में ही शुरू हुई। इन्होंने अनेक भाषाओं का ज्ञान अर्जित किया जिनमें संस्कृत, हिन्दी, अरबी, फारसी, उर्दू, खड़ी बोली, अवधी इत्यादि प्रमुख हैं। अकबर के कहने पर रहीम ने अंग्रेजी और फ्रेंच भाषाओं का भी ज्ञान अर्जित किया। ये बहुत दानवीर व्यक्ति थे। गरीब व दीन दुःखियों की सहायता करने को ये सदैव तत्पर रहते थे।

विश्लेषण– अब्दुर्रहीम खानखान या रहीम एक मध्यकालीन कवि, सेनापति, प्रशासक, आश्रयदाता, कूटनीतिज्ञ, दानवीर, कलाप्रेमी, विद्वान और बहुभाषाविद् थे। रहीम का व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न था। मुसलमान होने पर भी वे भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक तथा सभी संप्रदायों के प्रति समादर भाव रखते थे। जन्म से मुसलमान होने पर भी हिन्दू जीवन का जो अंकन इन्होंने किया, उससे इनकी विशाल हृद्यता का परिचय मिलता है। रहीमदास एक बहुत विद्वान और शास्त्रज्ञ कवि थे। कवि होने के साथ–साथ वे एक वीर योद्धा भी थे। वे कलम के साथ–साथ तलवार के भी धनी थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने रहीम के विषय में कहा है, ''भाषा पर तुलसी का सा ही अधिकार हम रहीम का भी पाते हैं।''[1] रहीम हिन्दी, संस्कृत और फारसी के तो प्रसिद्ध कवि थे ही, साथ ही तुर्की व अरबी भाषा पर भी इनका असाधारण अधिकार था। ये नीतिपरक कवि के रूप में भी विख्यात थे और इनके नीतिपरक दोहे संस्कृत के कवि कौटिल्य की याद दिलाते हैं। इसी कारण हिन्दी में नीतिपरक दोहों की रचना करने में रहीम का योगदान अद्वितीय है। बरवै छंद का भी रहीम ने अनूठा प्रयोग किया था। उनके विविध विषयों पर लिखित रचनाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि रहीम को हिन्दू धर्मशास्त्र और रीति–नीति का अच्छा ज्ञान था। उनकी रचनाओं को देखने से ज्ञात होता है कि उनमें भक्ति, रीति–नीति और श्रृंगार का अद्भुत सामंजस्य था। इतना ही नहीं राजकाज के कार्य में भी रहीम का योगदान अविस्मरणीय था। ''अकबर के शासनकाल में भेजे जाने वाले पत्रों तथा सरकारी आदेशों आदि का प्रारूप रहीम ही तैयार करते थे।''[2] रहीम अकबर के दरबार में पले–बड़े थे जिस कारण वे सैनिक कार्यों में बचपन से ही बेजोड़ थे। वे तीर व तलवार चलाने में निपुण थे तथा घोड़े की सवारी भी करते थे। रहीम के इन तीन गुणों से प्रभावित होकर कुछ कवियों ने उन पर काव्य रचनाएँ लिखी हैं। इनके तीर चलाने का वर्णन करते हुए कवि मण्डन ने लिखा है–

''ओहती अटल खान साहब तुरक मान,
तेरी ये कमान तोसो तेहू सौं करत हैं।''[3]

रहीम तीर तलवार से अधिक महत्व देते थे समय को। वे समय के पारखी और कद्र करने वाले व्यक्ति थे। इसके साथ ही वे बहुत दानवीर भी थे। वे अपनी सम्पति का प्रयोग दान और धर्म के लिए करते थे। बीरबल की दान गाथाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं। रहीम की युद्ध वीरता का वर्णन तो कुछ इतिहास ग्रन्थों तक ही सीमित रहा है परन्तु इनकी दानवीरता का वर्णन जन–जन की जिह्वा पर आज भी अंकित है। इनकी दानवीरता के विषय में प्रचलित है कि जिस घर से दरिद्रता नहीं निकलती थी तो समझो कि वह रहीम के द्वार तक नहीं पहुँच पाया–

''खानखाना न जाचियो, जहाँ दारिद्र न जाय।
कूप नीर अद्रे बिना, नीली धरा न पाय।।''[4]

रहीम का व्यक्तित्व जितना महान था, इनका कृतित्व भी उतना ही महान् था। रहीम एक कालजयी कवि थे। इन्होंने अपनी रचनाओं से हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया और इसके साथ ही अनेक विद्वानों, आलोचकों एवं संपादकों ने इनकी रचनाओं का संग्रह एवं प्रकाशित करके इनकी रचनाओं को जनसाधारण में जीवंत रखा है। रहीम की उपलब्ध प्रामाणिक रचनाएँ निम्नलिखित हैं जिनके द्वारा इन्होंने हिन्दी साहित्य में अभूतपूर्व योगदान दिया है–

1.**खेटकौतुकम**– यह काव्य नहीं, अपितु एक ज्योतिष ग्रन्थ है। यह रहीम की प्रथम रचना है। इसमें 124 श्लोक हैं जिनमें प्रारंभ के दो श्लोक मंगलाचरण के हैं। रहीम ने मंगलाचरण में स्पष्ट कहा है कि इन्होंने पंडितों द्वारा प्रयुक्त फारसी मिश्रित भाषा का प्रयोग किया है। रहीम फारसी भाषा के ज्ञाता थे और ये अकबर की शिक्षा नीति के अनुसार विधाध्ययन करते थे। रहीम को संस्कृत, ज्योतिष और हिन्दू धर्मग्रन्थों का भरपूर ज्ञान था जिस कारण इन्हें फारसी–संस्कृत मिश्रित भाषा में ग्रन्थ लिखने में इन्हें कोई कठिनाई नहीं आई परन्तु इनका यह प्रथम प्रयास था जिस कारण इनकी भाषा में सुथरापन या कौशल नहीं था। इस ग्रन्थ में हिन्दी–फारसी का अनुपात भी नहीं निभ पाया है। कहीं हिन्दी की शब्दावली अधिक है तो कहीं फारसी की। 'खेटकौतुकम रहीम' की उस काल की रचना है जब इन्हें संस्कृत या फारसी का संपूर्ण ज्ञान नहीं था और इन भाषाओं पर रहीम की पकड़ अच्छी नहीं थी। संभवतः यह रहीम के छात्र जीवन की रचना है।

2.**मदनाष्टक**– उस समय जनता की आम भाषा फारसी तथा देशी भाषाओं का मिश्रण थी, जो उस समय की लश्करी भाषा या रेखता (उर्दू) कहलाती थी। रेखता भाषा का उल्लेख रहीम ने अपने ग्रन्थ मदनाष्टक में इस प्रकार किया है–

''जरद बसन वाला, गुलचमन देखता था।
झुक–झुक मतवाला, गावता रेखता था।''[5]

मदनाष्टका के प्रथम पद में कृष्ण के वेणु–वादन से मंत्र–मुग्ध गोपिका का अपने सुत और पति को छोड़कर वन में चले जाने का वर्णन है। दूसरे पद में गोपिका द्वारा प्रणय –विभोर होने और पीताम्बरधारी कृष्ण के दर्शनों का उल्लेख मिलता है। मदनाष्टक के अन्तिम पद में विरह–विह्वल गोपिका के अन्तःकरण का अर्न्तनाद है–

''पकरि परम प्यारे साँवरे को मिलाओ।
असल अमृत प्याला क्यों न मुझको पिलाओ।।''[6]

3.**नगर शोभा**– रहीम के ग्रन्थ नगर शोभा में नगर के भवनों, उद्यानों का वर्णन न करके नगर के मूर्तिमान रहस्य, नारी सौन्दर्य इत्यादि का वर्णन मिलता है। इसकी लिखने की प्रेरणा रहीम को अकबर के मीना बाजार से मिली थी। अकबर के मीना बाजार में नगर के सम्भ्रान्त कुलों की स्त्रियां आती थी और वहाँ पर क्रय–विक्रय की सभी व्यवस्था स्त्रियाँ ही देखती थी। मीना बाजार के सौन्दर्य सरोवर में रसिक हृदय रहीम की आत्मा तृत्प हो गई होगी जिससे प्रेरित होकर ही रहीम ने नगर शोभा की रचना कर डाली। नारियों के उस सुन्दर नगर की शोभा को रहीम ने अपने शब्दों में पिरो दिया। इसमें विभिन्न उद्योग–धन्धों में संलग्न स्त्रियों का चित्रण किया गया है। यहाँ के रूप

सौन्दर्य राशि में अपने को लघुमति मानते हुए कवि कहता है–

''आदि रूप की परम दुति, घट–घट रही समाइ।
लघुमति ते मो मन रसन अस्तुति कही न जाइ।।''[7]

इस वर्णन से मिलता–जुलता वर्णन नन्ददास ने भी अपनी रचना 'रसमंजरी' में कुछ इस प्रकार किया है–

''रूप प्रेम आनन्द रस, जो कछु जग में आहि।
सौ सब गिरधर देव कौ, निधरक बसौ ताहि।।''[8]

रहीम ने 'नगर शोभा' में विभिन्न जाति की स्त्रियों के सौन्दर्य का वर्णन बड़ी शिष्टता, तल्लीनता और काव्यात्मकता के साथ किया है जिनमें ब्राह्मणी, भंगिनी, खतरानी, जौहरिन, बढैन, सुनारिन, चमारी, नटनी, तुर्कनी इत्यादि लगभग सत्तर जाति की कुलांगनाओं का वर्णन एक सौ बयालिस दोहों में किया गया है। औसतन एक जाति के लिए दो दोहे प्रयुक्त किये गए हैं। आवश्यकतानुसार कहीं–कहीं वर्णन करने के लिए दो से कम या कहीं–कहीं दो से अधिक दोहों का प्रयोग किया गया है। कवि ने इसमें जाति विशेष के सामाजिक गौरव का ध्यान रखते हुए उसी उद्योग में काम आने वाले पदार्थों एवं उपकरणों से जाति विशेष की नायिका का सौन्दर्य–चित्रण किया है।

4.**बरवैनायिका भेद**– यह रहीम की एक सुप्रसिद्ध कृति है जिसमें नायिकाओं के भेदों व प्रभेदों का वर्णन किया गया है। रहीम के समय में नायिका भेद के ग्रन्थ प्राप्त नहीं होते थे, यही कारण है कि रहीम ने अपने विवेचन का आधार संस्कृत ग्रन्थों को बनाया है। जिस प्रकार नायिका भेद हिन्दी साहित्य के लिए नया विषय था, उसी प्रकार बरवै भी नया छंद था। रहम की मौलिकता, शास्त्रीय ज्ञान और आचार्यत्व का इससे बड़ा प्रमाण और क्या होगा कि इन्होंने हिन्दी को एक नया विषय नए छंद में दिया। बरवै को नया छंद इसलिए कहा जाता है क्योंकि रहीम ही बरवै छंद के साहित्यिक जनक माने जाते हैं।

5. **श्रृंगार सोरठा**– 'बरवै नायिका भेद' की तरह रहीम की रचना 'श्रृंगार सोरठा' भी महत्वपूर्ण रचना मानी जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ॰ राम कुमार वर्मा सरीखे विद्वानों ने अपने इतिहास ग्रन्थों में रहीम द्वारा लिखित 'श्रृंगार सोरठा' का वर्णन किया है परन्तु यह रचना प्राप्त नहीं हो पाई है। इस ग्रन्थ के विषय में यह कहा जाता है कि ग्राम वधुएँ एक–दूसरे के घर चूल्हा फूँकने के लिए आग लेने एक–दूसरे के घर जाया करती थी। रहीम ने ऐसे ही किसी एक युवती को आग माँगते हुए देखा होगा और रहीम के मन में उस युवती के प्रति आकर्षण जागा होगा। उसी घटना का वर्णन कवि ने इस रचना में किया है। अतः यह देखा जा सकता है कि आग लेने जैसी घटना पर भी कविता की जा सकती है। ऐसा एक अन्य वर्णन कवि ने किया है–

''दीपक हिए छिपाय, नवल वधू घर लै चली।
कर बिहीन पछितात, कुच लखि निज सीसै धुनै।।''[9]

संध्या के समय युवतियाँ एक–दूसरे के घर दीपक जलाने को जाती हैं तथा जलते दीपक के बुझने के डर से उसे साड़ी के आँचल से ढक लेना बहुत ही स्वाभाविक है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इनके विषय में कहा है, ''निस्संदह इस कवि (रहीम) का हृदय मानवीय रस से परिपूर्ण था और अनासक्त तथा अनाविल सौन्दर्य की दृष्टि से समृद्ध था।''[10]

6.**फुटकर बरवै**– रहीम के नायिका भेद के बरवौं के अतिरिक्त कुछ अन्य फुटकर बरवै भी मिलते हैं। एक प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक को आधार बनाकर पं॰ मायाशंकर याज्ञिक ने इस प्रकार के फुटकर बरवौं, जिनकी संख्या एक सौ पांच है, का संपादन 'रहीम रत्नावली' में किया है। इन बरवौं में ऋतु वर्णन, ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, धर्मोपदेश, प्रेम की पीर इत्यादि का वर्णन मिलता है।

निष्कर्ष–

रहीम की समस्त रचनाओं का अध्ययन कर लेने के उपरांत इस संदर्भ में कोई संदेह नहीं रह जाता है कि रहीम उच्च प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे।

उन्होंने अपने जिस व्यस्त जीवन व विरोधी कार्य व्यापार में संलग्न रहते हुए जो काव्य रचना की, वह सराहनीय होते हुए स्तुत्य भी है। भक्तिकालीन नीतिकार कवियों में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। रहीम के दोहे इतने प्रसिद्ध हुए कि जनता में आज भी प्रचलित हैं और उनकी जुबान पर आज भी सुरक्षित हैं। रहीम ने अपने पिता बैरम खां के समान ही अतालीक खानखाना प्रधान सेनापति तथा वकील मुतलक आदि मुगल दरबार के उच्चतम पदों को प्राप्त किया था। रहीम का व्यक्तित्व सर्वतोन्मुखी प्रतिभा सम्पन्न था। वे एक साथ ही कुशल सेनापति, प्रशासक, कुटनीतिज्ञ, आश्रयदाता, बहुभाषाविद्, कलापारखी, कवि, विद्वान, इत्यादि अनेक गुणों से सम्पन्न थे। वे जन्म से मुसलमान अवश्य थे परन्तु हिन्दूत्व के प्रति उनके अपार स्नेह ने उन्हें भारतीयों की श्रद्धा का पात्र बना दिया था। रहीम ने हिन्दी साहित्य को अनेक प्रसिद्ध रचनाओं का उपहार दिया जिनमें इनकी विद्वता की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। इनके भक्त हृदय में सवैया व घनाक्षरी के प्रति प्रेम प्रस्फूटित हुआ है। इन्होंने अपनी रचनाओं में ईश्वर के सगुण रूप के प्रति निष्ठा, महाभारत, पुराण आदि क्षेत्रों के उदाहरण, देवी–देवताओं के प्रति पूज्य भाव–नीति, भक्ति, निष्ठा और काव्य गरिमा को एक साथ आपूरित किया है। इन सभी तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि यदि भक्तिकालीन कवि मानव जीवन का कंठहार है, तो कविवर रहीम उस कंठहार का एक ऐसा हीरा है जो अपनी काव्य–प्रतिभा के प्रभामंडल से युगों–युगों तक जीवन–जगत को आलोकित करते रहेंगे।

संदर्भ –

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ॰ 120.
2. अबुल फजल, आइने अकबरी, पृ॰ 102
3. रहीम रत्नावली, पृ॰ 78.
4. वही, पृ॰ 88.
5. वही, पृ॰ 73
6. वही, पृ॰ 411
7. रहीम, नगर शोभा, पृ॰ 28
8. नन्ददास, नन्ददास ग्रन्थावली, सं॰ ब्रजरत्नदास,नागरी प्रचारिणी सभा काशी, पृ॰ 126.
9. सं॰ पं॰ मायाशंकर याज्ञिक, रहीम रत्नावली, पृ॰ 80.
10. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य, सं॰ 2009, पृ॰ 204